ओ३म्

ब्रह्म यज्ञ



अश्रुत पूर्व
क सन्ध्या संगीत”

‘लेखक’

रामचन्द्र विद्यालंकार
भू. पू. पुरोहित आर्य समाज मांडले ब्रह्म देश

तथा

आर्य समाज आदर्श नगर जयपुर
3. ज. 8. जवाहर नगर जयपुर–4

उदयपुर सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी के अवसर पर

दयानन्दाब्द 256
विक्रमी संवत् 2038
सन् 1981

प्रथम संस्करण

मूल्य 2-00 रुपये

ओ३म्



ब्रह्मयज्ञ

अश्रुत पूर्व

"वैदिक सन्ध्या संगीत"

लेखक
रामचन्द्र विद्यालंकार
भू० पू० पुरोहित आर्य ससाज

मांडले ब्रह्मदेश
आर्य समाज आदर्श नगर
जयपुर
श्रावणी पर्व

दयानन्दाब्द 156
वि० सम्वत् 2038
प्रथम संस्करण

आर्य शिरोमणि विद्वानों की शुभ सम्मत्तियां :—

(1) श्री डा० भवानीलाल जी भारतीय

प्रोफेसर तथा अध्यक्ष दयानन्द चेयर फॉर वैदिक स्टडीज पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़—14 (चण्डीगढ़ जी. 3 पंजाब वि. वि.)

दिनांक 2-2-8

श्रीयुत विद्यालंकार जी, नमस्ते

आपका पत्र तथा संध्या संगीत की पाण्डुलिपि मिली। मैंने यथा शक्य देखा है। आपने परिश्रम पूर्वक वैदिक सन्ध्या के मंत्रों को पद्य-बद्ध करने का सुचारू प्रयास किया है। इस प्रकार के प्रयासों से जहां सन्ध्या के मंत्रों की भाव प्रवण व्याख्या पाठकों तथा कर्मकाण्डियों के चिंतन में सहायक होती है वहां मन्त्रों के पद्यानुवाद सहित पाठ करने में भी एक अपूर्व आनन्द की प्राप्ति होती है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि आप इसे यथा शीघ्र प्रकाशित करायें ताकि अधिकाधिक लोगों को इसका लाभ मिल सके।

भवदीय

भवानीलाल भारतीय

(2) श्री परिव्राजक स्वामी जगदीश्वरानन्द जी महाराज

"वैदिक सन्ध्या संगीत" का अधिकांश भाग श्री पं० रामचन्द्र जी विद्यालंकार के मुखारविन्द से श्रवण किया। पं० जी ने बड़े मनोयोग से सन्ध्या के एक-एक पद को संगीत में समाविष्ट कर सचमुच ही अपूर्व रचना की है। संगीत में गेयता तो है ही अर्थों को यथा तथ्य रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है। कहीं कहीं एक से अधिक अर्थ भी किये हैं। पाठक इससे लाभान्वित होंगे, ऐसा विश्वास है।

श्री विद्यालंकार जी आर्य समाज की सेवा करते हुए शतायु हों, मंगलमय प्रभु से यही कामना है।

शुभ कामनाओं सहित

जगदीश्वरा नन्द

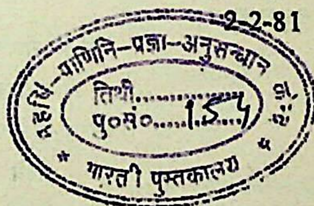
2-2-81

पता :—

वेद सदन

एच 1/2 माडल टाउन

दिल्ली—110009



ओ३म्

(3) श्री डा. सूर्य देव जी शर्मा सि. शास्त्री

सिद्धांत वाचस्पति, साहित्यालंकार, एम. ए, एल. टी., डी. लिट्,
परीक्षा मंत्री

भारत वर्षीय
आर्य विद्या परिषद्
अजमेर 26-2-81

श्रीयुत भाई रामचन्द्र जी, सप्रेम नमस्ते,

आपके द्वारा प्रेषित हस्तलिखित पुस्तक "वैदिक सन्ध्या संगीत" प्राप्त हो गई थी। परन्तु इन दिनों मैं भा० व० आर्य विद्या परिषद् की धर्म परिक्षाओं के कार्य में अत्यन्त व्यस्त रहने के कारण आपको शीघ्र उत्तर न दे सका, क्षमा करें।

सन्ध्या मन्त्रों का पद्यार्थ कई आर्य विद्वानों ने पहले भी किया है। मेरा पद्यानुवाद तो "आर्य मित्र" में भी छपता रहता है और फिर पुस्तक रूप में प्रकाशित हुआ था, परन्तु आपने सन्ध्या मन्त्रों के पद्यार्थ में संगीत का पुट देकर उसे और भी अधिक रुचि कर और भक्ति-मय बना दिया है। एतदर्थ आप बधाई के पात्र हैं। पुस्तिका बहुत उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसी आशा है।

मेरा हार्दिक आशीर्वाद है, आप अपने साहित्य-संगीत-सेवा-कार्य में सफल हों।

"श्रुति-सन्ध्या-संगीत" मय
सफल रहे सब काल।
वैदिक-धर्म-प्रचार में
सावे कार्य विशाल॥

छपने पर दो-तीन प्रतियां भेजने की कृपा करना।

भाई डा० सूर्यदेव शर्मा M. A. D. Lit,
चांद बावड़ी अजमेर

 126/4

(4) श्री डा. मथुरा लाल जी शर्मा
भू० पू० उप कुलपति

दो शब्द

सन्ध्योपासना करना प्रत्येक आर्य का प्रथम कर्त्तव्य है। वैदिक सन्ध्या प्राचीनतम है। अतः उसे समझना कठिन है। कई विद्वानों ने इस का हिन्दी में अनुवाद किया है। गद्य और पद्य दोनों में अनुवाद हुए हैं। अनुवादकों ने ऋषि दयानन्द सरस्वती की पद्धति का आश्रय लिया है। श्री रामचन्द्र जी का 'सन्ध्या संगीत' इसी कोटि का है। अनुवाद को समझने के हेतु इसको वार वार पढ़ना चाहिये और अर्थ पर चिन्तन करना चाहिये। एक मास के अभ्यास से सन्ध्या सुगम हो जाएगी भजन और संगीत मूल सन्ध्या से किंचित् पृथक् हैं। इनका भी वार बार पाठ करना चाहिये।

विद्यालंकार जी का परिश्रम श्लाघ्य और उपयोगी है। मैं इसका स्वागत करता हूं।



दिनांक 7-1-81

मथुरा लाल शर्मा

(5) श्री डा. सुधीर कुमार जी गुप्त

एम. ए. पीएच. डी. शास्त्री, प्रभाकर, स्वर्णपदकी, प्रभापक (प्रोफेसर) संस्कृत विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय आदरी निदेशक, भारती मन्दिर अनुसंधान शाला, सम्पादक भारती शोध सार संग्रह 1 व 2

तिथि 6-1-81

1. पं० श्री रामचन्द्र विद्यालंकार द्वारा रचित "वैदिक सन्ध्या संगीत" की हस्तलिखित प्रति आद्योपान्त देखकर परम हर्ष हुआ। यह रचना सरल, सरस, मधुर और मन्त्रों के भावों के यथार्थ रूप को प्रकाशित करने वाली तथा भक्ति भाव से पूरित है। बालक, युवा वृद्ध सभी नर-नारी इसका गान कर आनन्द विभोर हो सकते हैं। इसमें मूल मंत्र, मन्त्र का पद्यमय मूल पदों युक्त हिन्दी अनुवाद और उसमें निवद्ध भाव का पद्यात्मक चित्रण मनमोहक है।

2. सामान्यतः सन्ध्या मन्त्रों का अर्थ लोगों को अपरिचित रहता है। यह लघु कृति अनायास ही माधुर्य की सृष्टि करती हुई सभी मन्त्रों के अर्थों और भावों का बोध कराती है। इसमें मूल मन्त्रों और उनके भावों की विस्मयकारी रक्षा की गई है। मुझे विश्वास है कि यह रचना न केवल आर्य समाज के क्षेत्र में, अपितु अन्य क्षेत्रों में भी धर्म जिज्ञासुओं की आध्यात्मिक पियासा को शान्त करती हुई सभी को ईश्वरोन्मुख कर सकेगी तथा सन्ध्या आदि कर्मों में सबकी रुचि को जागृत और परिष्कृत करेगी। स्कूलों के बालकों में इसका प्रयोग निश्चय फलप्रद हो सकेगा।

3. मेरी पण्डित जी को सादर शुभ कामनाएं हैं। भगवत् कृपा से उनका परिश्रम और लक्ष्य सफल हों और लोक कल्याण हो।

स० कु० गुप्त

(6) श्री डा. सत्यदेव जी आर्य

एम. वी. वी. एस. (कल) डी. पी. एच. (इंगलैंड)
भू. पू. निदेशक. चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं राजस्थान

दिनांक 28-12-80

पण्डित रामचन्द्र जी विद्यालंकार ने "वैदिक-सन्ध्या-संगीत" की सरल पद्य शैली में रचना करके आर्य परिवारों के लिये एक उपयोगी कृति उपलब्ध की है। इस छोटी सी लघु पुस्तिका में पं० जी ने सन्ध्या के वेद मन्त्रों का सरल शब्दार्थ एवं सुगमता से समझ में आने योग्य कवित्तमय भाषा-भाष्य प्रस्तुत किया है जो आर्य परिवारों के बालक-बालिकाओं व उनके अभिभावकों के लिये निश्चय ही उपयोगी सिद्ध होगा। अन्य उन सभी महानुभावों के लिये भी यह यथेष्ठ हितकर सिद्ध होगा जो वैदिक सन्ध्योपासना में रुचि रखते हैं।

पण्डित जी की इस सुष्टु रचना के लिये उन्हें हार्दिक साधुवाद। यह पुस्तिका अधिकाधिक लोकप्रिय हो इसी कामना के साथ।

सत्यदेव आर्य

(7) श्री प्रो० नेतिराम जी शर्मा

उप प्रधान राज० आर्य प्रतिनिधि सभा एवं प्रधान आर्य समाज कृष्णपोल बाजार तथा निदेशक आई० ए० एस० कोचिंग इंस्टीट्यूट (राज० विश्वविद्यालय) (भूतपूर्व विभागाध्यक्ष रा० विश्वविद्यालय विधि अध्ययन)।

आदरणीय पं० रामचन्द्र जी विद्यालंकार ने "वैदिक सन्ध्या संगीत" की रचना करके आर्य जगत् को एक अनुपम भेंट की है। पाठक गण भली भांति परिचित हैं कि वैदिक सन्ध्या पर काफी पुस्तकें उपलब्ध हैं और सभी ने शब्दार्थ एवं सुन्दर भावार्थ देने का अपने अपने ढंग से प्रयास भी किया है। परन्तु इस छोटी सी पुस्तिका में विद्वान लेखक का अनूठापन इस तथ्य से परिलक्षित होगा कि प्रत्येक शब्द का भिन्न भिन्न शब्दार्थ पद्य में ही करते हुए पूर्ण मन्त्र के अर्थ को छन्दोवद्ध किया है। इससे पाठक गण मन्त्र के प्रत्येक शब्द का ठीक ठीक अर्थ भी ग्रहण कर पावेंगे और साथ ही संगीत:सुधामृत का पान करते हुए उसे कण्ठाग्र करने में भी सुविधा रहेगी। आशा है कि सभी आर्य-जन इसका स्वयम् भी लाभ उठायेंगे और आर्य कुमारों को भी केन्द्रों के द्वारा सन्ध्या को कण्ठाग्र करने की प्रेरणा देंगे।

विद्वान् लेखक का यह पावन प्रयास निश्चय ही स्तुत्य है। इस रीति से सभी पाठकों को संस्कृत शब्दों के अर्थ ग्रहण करने का अभ्यास होगा और संस्कृत भाषा के प्रचार में सहायता मिलेगी। यह अपने ढंग के एक नये प्रयास का शुभारम्भ मात्र है। आशा है अन्य विद्वान् लेखक भी इस परिपाटी को अपनायेंगे।

प्रो० नेतिराम शर्मा

जयपुर
दिनांक 25 दिसम्बर 1980

(8) आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय एम० ए०
ग्राम व पोस्ट जरीफ नगर जिला वदायूं (उ० प्र०)

ओ३म्

गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नातक वयोवृद्ध विद्वान् श्री पण्डित रामचन्द्र जी विद्यालंकार द्वारा रचित 'अश्रुत पूर्व वैदिक सन्ध्या संगीत' नामक पुस्तक पढ़ने को मिली। इसमें अंटसंट ढंग से ही नहीं लिखा गया है अपितु बड़ी गम्भीरता एवं रोचक ढग से मन्त्रों का भाव अपनी कविता में संजोया है। कहीं कहीं तो अर्थ करने तथा आशय प्रकट करने का प्रकार मनोहर बन पड़ा है। पण्डित जी का कार्य अत्यन्त श्लाघनीय है।

यह पुस्तक सर्भ. सन्ध्या प्रेमियों के लिए अति लाभकारी होगी।

आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय

दिनांक 8 फरवरी 1981

(9) प्रिंसिपल दयानन्द पब्लिक स्कूल आदर्श नगर एवं मंत्री आर्य समाज आदर्श नगर जयपुर ।

पं. रामचन्द्र जी विद्यालंकार द्वारा लिखित "वैदिक सन्ध्या संगीत" का वेदानुयायियों द्वारा सर्वत्र स्वागत होगा ऐसा मेरा अभिमत है ।

आज कल सर्वत्र यही चर्चा है कि आर्य समाज की वर्तमान शोचनीय स्थिति का क्या कारण है ? अमर आर्य समाज भी आज मृत्यु का शिकार वन रहा है ? आर्य-जगत् में सर्वत्र यह प्रश्न भी पूछा जाता है कि आर्य-परिवारों की नई पीढी आर्यसमाज और वेदों से अलग क्यों होती जा रही है ? नई पीढ़ी की आध्यात्मिकता के प्रति रुचि क्यों नहीं है?

इन प्रश्न कर्त्ताओं को मैं छान्दोग्य उपनिषद् की एक कथा सुनाता हूं । एक वार मृत्यु, देवताओं के पीछे पड़ गई । अपनी प्राण रक्षा के लिये देवता भागते-भागते वेदों के छन्दों में छिप गये । इसलिये कुछ विद्वान् लोग आच्छादन शब्द को व्युत्पत्ति छन्द शब्द से वताते हैं । देवताओं को छन्दों में छिपा हुआ मृत्यु ने देख लिया । देवता फिर भागे और भागते भागते वेदों के स्वर में छिप गये और मृत्यु फिर निराश हो कर लौट गई ।

आज आर्य समाज में स्वर और संगीत का अभाव है। सामवेद की तो रचना ही संगीत के लिये हुई। अन्यथा ऋग्वेद और सामवेद में क्या अन्तर है ? संगीत और स्वर के अभाव में आर्य समाज निष्प्राण और मृत प्राय हो गया है जबकि दूसरे पाखण्डी मतमतान्तर सगीत के माध्यम से मृत्यु से बचे हुए हैं ।

यही कारण हैं कि नई पीढ़ी की आर्य समाज के प्रति कोई रुचि नहीं रही ।

इसी कमी को पं. रामचन्द्रजी ने "वैदिक-सन्ध्या-संगीत" लिख कर पूरा करने का प्रयास किया है। पंडित जी गुरुकुल कांगड़ी के विद्वान् स्नातक हैं और वेद मंत्रों का अनुवाद हृत्तन्त्री को निनादित करने वाला है।

मेरा पूर्ण विश्वास है कि "वैदिक सन्ध्या संगीत" आर्य जगत् को आसन्न मृत्यु से बचायेगा और वैदिक उपासना का सर्वत्र प्रचार होगा।

पण्डित जी के इस स्तुत्य प्रयास के लिये जितना लिखा जाये उतना कम है। विशेष रूप से समस्त आर्य बन्धुओं से अनुरोध है कि वे वेद प्रचार की दृष्टि से इस पुस्तक को घर घर तक पहुंचायें।

सत्यव्रत साम वेदी
मन्त्री
आर्य समाज, आदर्श नगर
जयपुर

दिनांक 7-4-81

(10) प्रिंसिपल वैदिक बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय राजापार्क

प्राक् कथन

प्रत्येक प्राणी संसार में रहते हुए सुख मय जीवन विताना चाहता है। सुख और दुःख हृदय द्वारा अनुभव किया जाता है। यदि प्रातः काल ही हृदय "वैदिक-सन्ध्या-संगीत" से सरावोर हो जाए तो क्लेश को तिरोहित किया जा सकता है।

पंडित रामचन्द्रजी विद्यालंकार आर्य ग्रन्थों का अध्ययन करने वाले महाविद्वान् हैं। कई वर्षों तक आर्यसमाज मांडले (ब्रह्मदेश) एवं आर्य समाज आदर्श नगर जयपुर के पुरोहित रहे। इन्होंने अनुभव किया कि लोग सन्ध्या हवन करते हुए वैदिक मन्त्रों का उच्चारण तो करते हैं परन्तु अर्थ नहीं समझते। पुरानी पीढ़ी तो अपना धर्म मानकर परिपाटी निभा रही है। किन्तु आज के वैज्ञानिक युग की नवीन पीढ़ी अर्थ को न समझने के कारण विमुख हो रही है। अतः इन के हृदय में एक तड़प उठी और उसी कसक एवं वेदना से प्रेरित हो कर इन्होंने वैदिक सन्ध्या का अति मनोरम तथा मधुर शब्दों में संगीत मय अनुवाद कर दिया। मैंने इस अनुवाद को पढ़ा गया और अपूर्व आनन्द प्राप्त किया।

गायत्री मन्त्र एवं शान्ति पाठ का कथन प्रायः प्रत्येक अवसर पर किया जाता है : अर्थ को समझते हुए अनन्य श्रद्धा भक्ति से इस का पाठ करने के लिये पण्डित जी ने अति सुन्दर शब्दों में संगीत मय पद्य रचे हैं जिन्हें गाकर प्रत्येक प्राणी प्रभु भक्ति में तन्मय हो जाता है।

हमें अपने समाज, राष्ट्र एवं विश्व को सुखी बनाने के लिए वैदिक सभ्यता और संस्कृति का प्रचार प्रसार करना ही होगा। यह प्रचार हिन्दी में ही हो तभी जन-जन तक पहुंच सकता है। इसी भावना को लेकर आर्य समाज के मजे हुए पुरोहित ने "वैदिक-सन्ध्या संगीत" को लिपिवद्ध किया है।

निस्सन्देह पण्डित जी का यह प्रयास अति श्लाघनीय है। मैं चाहती हूं कि प्रत्येक प्रणी प्रातः एवं सायं काल इस सन्ध्या सगीत का रसास्वादन करे।

दिनांक 26.1.81

कु. कान्ता गुप्ता

धन्यवाद और आभार

इस लघुकृति में महर्षि स्वामी दयानन्द लिखित 'पंचमहा यज्ञ विधि से श्री स्वामी विद्यानन्द जी विदेह लिखित' सन्ध्या योग एवं यजुर्वेद भाष्य कार पं. जयदेवजी विद्यालंकार के भाष्य से बहुत सहायता मिली एतदर्थ सभी का आभार मानता हूं।

परमपिता परमेश्वर की अतिशय धन्यवाद है जिस की अपार कृपा से आर्थिक संकट से मुक्त हो कर अपने प्रिय पाठ को तक "वैदिक सन्ध्यां संगीत" लहरी पहुंचाने में समर्थ हो सका।

रामचन्द्र वि अ.

ओ३म्

"सन्ध्या को पढ़ के देख"

आनन्द स्त्रोत बह रहा, डुबकी लगा के देख ।
निश्चय ही झूम जाये मन सन्ध्या को पढ़ के देख ।।
सन्ध्या है वेद वाणी प्रभु की हृदय से मान ।
प्रभु से प्रभु की वाणी ही तो मिलाएगी यह जान ।।
अन्तःकरण के नेत्र जरा खोल कर तो देख ।
निश्चय ही झूम जाये मन सन्ध्या को पढ़ के देख ।।
सन्ध्या में जहां ध्यान है करना परेश का ।
मुंह मोड़ प्रकृति से जरा चिन्तन महेश का ।।
परमात्मा में आत्मा का होता मिलन तू देख ।
निश्चय ही झूम जाय मन सन्ध्या को पढ़ के देख ।।
लेना सदुपयोग भी प्रकृति का जान लें ।
हो अभ्युदय सब भान्ति भी प्रभु से यह मांग लें ।।
सिद्धि निःश्रेय प्रेय की होती हुई तू देख ।
निश्चय ही झूम जाय मन सन्ध्या को पढ़ के देख ।।

उद्‌बोधन

भीतर है सखा तेरा जरा मन टिका के देख ।
अन्तःकरण में ज्ञान की ज्योति जगा के देख ।।

1. हैं इन्द्रियों की शक्तियां बाहर की ओर जो ।
बाहर की ओर से इन्हें भीतर को मोड़ दो ।।

कर द्वार सकल बन्द समाधि लगा के देख।
अन्तःकरण में ज्ञान की ज्योति जगा के देख॥

2. शुद्ध आत्मा से उसकी तू रचना का ध्यान कर।
निश्चय ही झूम जायगा महिमा का गान कर॥
श्रद्धा की देवी रूठी हुई है मना के देख।
अन्तःकरण में ज्ञान की ज्योति जगा के देख॥

3. साथी पवित्र देव हों बिगड़ी बने न क्यों।
जीवन यह तेरा भक्ति रस में सने न क्यों।
आदर्श भक्तों जैसा तू जीवन बना के देख।
अन्तःकरण में ज्ञान की ज्योति जगा के देख॥

4. मिलता है सखा तेरा इसी ही उपाय से।
मिलता नहीं कदापि वह अन्यत्र जाय से।
ईश्वर की वाणी वेद कहे आजमा के देख।
अन्तःकरण में ज्ञान की ज्योति जगा के देख॥



ओ३म्

ब्रह्म यज्ञ (सन्ध्योपासना)

अथ गायत्री मंत्र :—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो।
देवस्य धी महि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

यजु० 36/3 ऋक् 3/62/10

ओम् प्रभु का है निज नाम। उत्पत्ति-स्थिति-प्रलय है काम ॥
भूः है प्राणों से भी प्यारा। भुवः है दुःख विनाशन हारा ॥
स्वः सभी सुखों का दाता। सत्-चित्-आनन्द रूप विधाता ॥
तत उस, सवितुः जगदुत्पादक का। वरेण्यम् वरणीय प्रभु का ॥
भर्गः शुद्ध स्वरूप अघ नाशक[1]। देवस्य दिव्य गुण के प्रकाशक ॥
धी महि सदा ध्यान धरें हम। धियः सुप्रतिभा[2], बुद्धि को हरदम ॥
यः जो, नः हम सब को प्यारे। प्रचोदयात् प्रेरे, भव तारे ॥

संगीत 1.

सवितः देव। शरण तव[3] आये। सुख-शान्ति-परमानन्द पाये।
सत्-चित् आनन्द रूप पिताजी। सबके रक्षक परम पिताजी ॥
प्राणों के हे प्राण पिताजी। सब दुःख हरने वाले पिताजी ॥
सभी सुखों के दाता पिताजी। भव-भय-भंजक। शरणी आये ॥
सर्वोत्पादक सर्व पिताजी। ज्योति रूप, तेज पुंज, पिताजी ॥
तेरे अनिर्वचनीय[1] तेज का। शुद्ध हृदय में ध्यान लगायें ॥
तू वरेण्य भजनीय तू ही है। छोड़ तुझे न उपास्य कोई है।
सब भ्रम[2] भ्रांत भई बुद्धियों को। सत्पथ पर प्रेरित कर लायें ॥

1. पापनाशक 2. सुतीक्ष्ण सुविकसित 3. तेरी।

अविद्यादिक-दुःख-प्रद-विघ्नों को। भून डाल ज्ञान-सुख उपजादें।
ऐसे तेरे भजनीय भर्ग की। आत्मा में हम ज्योत जगायें।।

संगीत 2.

सवितः सूर्य। प्रकाशो मन में।।
जैसे प्रकाशित हो इस भू पर। अन्तरिक्ष लोक और सुद्यु[3] पर।
ऐसे ही मेधा चमका दो। हम अबोध जन-जन के मन में।।
औषध-वनस्पति-प्राणि-जगत के। उत्पत्ति-निमित्त[4]-भूत तुम्ही हो।
सु प्रकाशमान सूर्यदेव हे। अपनी ज्योत जगा जन-जन में।।
हे सेवनीय। जीवन में सेवें। दुर्गन्ध-जनित-जन्तु विनसायें।
धूप तेरी रोग नाशक जो है। स्वस्थ हों विधिवत् सेवें तन में।।
प्रातः उठ तन्द्रा को त्यागें। जीवन-शक्ति, सुबुद्धि पावें।
अन्धकार-तम गुण का क्षय हो। तव[5] आभा[6]-भासित हो क्षण में।।

(2) अथ आचमन मंत्रः

ओम् शंनो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः ।। यजु. अ. ३६/मं. १२ ।।

शम् सुखकर, नः हम सबको ही। देवीः दिव्य गुणों भ पूर।
अभिष्टये सब इष्ट सिद्धि हित। आपः जल धारायें परिपूर।।
भवन्तु हों, पीतये पान को। शंयोः शामक, भव दुःख हर।
अभिस्रवन्तु बहें सब ही ओर। नः हम सबके करुणाकर।।

संगीत 3.

जगदीश्वर। दिव्य जल धारायें। अभीष्ट सिद्धि के लिए सदा।
पीने के लिए सदा हों सुखकर। ताप हरें शम् कर हों सदा।।
कृषि-कर्म, कल-कारखानों में। यातायात में साधक हों।
सभी ओर से सुख दायक हों। उन्नति में न बाधक हों।।

---

1. प्रकाशमान लोक 2. कारण रूप
5. तेरी 6. चमक से चमतकृत।

(3) अथ इन्द्रिय स्पर्श मंत्राः

ओं वाक् वाक् । ओं प्राणः प्राणः । ओं चक्षुः चक्षुः ।
ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम् । ओं नाभिः । ओं हृदयम् । ओं कण्ठः ।
ओं शिरः । ओं बाहुभ्यां यशोबलम् । ओं करतल करपृष्ठे ॥

वाक् वाक् सत्य-हित-प्रिय भाषी और मधुर यह वाणी हो ।
प्राणः प्राणः प्राणशक्ति युत जीवन शक्तिशाली हो ॥
चक्षुः चक्षुः सत्य दृष्टि हो सत्य का द्रष्टा बन जाऊं ।
श्रोत्रम् श्रोत्रम् श्रवण सत्य हो सत्य का श्रोता बन जाऊं ॥
नाभिः जननेन्द्रिय शक्ति का मैं पावन-व्रत-धारी बनूं ।
हृदयम् शुद्ध हृदयम् उदार और निर्भय-साहस-धनी बनूं ॥
कण्ठः कण्ठ सुमधुर, सुकोमल द्वारा सबका प्यारा बनूं ।
शिरः सुचिन्तन, मनन के द्वारा । शुभ संकल्पों वाला बनूं ॥
बाहुभ्यां यशोबलम् भुजबल से । सुयशस्वी, प्रतापी बनूं ।
करतल से श्रमशील, धनी । पुरुषार्थी और क्रियाशील बनूं ॥
कर पृष्ठे त्यागी, दानी और । अपरिग्रही, परहितू बनूं ।
ज्ञानेन्द्रिय-कर्मेन्द्रिय द्वारा । सत्यं शिवं सुन्दरम् बनूं ॥

संगीत 4

वाक् वाक्

प्रभो । हमारे वाक् में हित-मित-सत्य समाये ।
मृदुता[1], सुदृढ़ प्रतिज्ञता और सुमधुरता आये ॥
प्रियता, वाक्[2] पटुता तथा निश्छलता गुण धारें ।
स्फुट् वाक्[3], यथार्थवादिता[4], शीतलताभी प्रसारें ॥

प्राणः प्राणः

आप जीवें और जीने देवें प्राण रूप ने दिये हैं प्राण ।
प्राणायाम द्वारा सुस्वस्थ रह सौ वरसों तक धारें प्राण ॥

---

1. अकथनीय 2. धोखे से फिर गई हुई 3. कोमलता 4. निपुणता 5. स्पष्ट वक्ता 6. सही-सही कहना ।

चक्षुः चक्षुः

चक्षु सुचक्षु होवे हमारी और सुदृष्टि बनी रहे ।
सस्नेह. सौम्य, समदृष्टि होवे उदार अघृणी[1] दृष्टि रहे ।।

श्रोत्रं श्रोत्रम्

श्रोत्र सुनें श्रुति वचन सदा ही और सुनें प्रभु भजन सदा ।
देश भक्त-सत्पुरुष चरित भी सुनें पिता-गुरु वचन सदा ।।

नाभिः

नाभि केन्द्र सुनियंत्रित[2] होवे, और सुमर्यादित[3] जीवन ।
सुखभोगें, सुस्वास्थ्य लाभ, सुत[4], पौत्र-प्रपौत्र का भी दर्शन ।।

हृदयम्

हृदय सुमैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का आगार ।
स्नेह तथा उत्साह, उदारता, पूर्ण सहानुभूति का द्वार ।।
विश्व प्रेम, सुश्रद्धा, भक्ति, दया, क्षमा, कोमलता, सुदान ।
सत्साहस, तन्मयत्ता, स्मित[5] मुखता और गम्भीरता, धर्म-प्रान ।।
"सर्वा आशा[6] भवन्तु[7] मित्रों मम[8]" का सुन्दर गावें गीत ।
हृदय विशाल हम सब का होवे लेवें हृदय सभी के जीत ।।

कण्ठः

कण्ठ सुकोमल, सुमधुर, सुन्दर, प्राण-मार्ग-जीवन आधार ।
जन-जीवन का सुमार्ग बतावें, सरस सुरीला पन ही धार ।।

शिरः

ज्ञान केन्द्र, कुविवेक, सुमति और कर्त्तव्याकर्त्तव्य-विवेक ।
चिन्तन, मनन, दया, न्यायरुचि[1] हो, मस्तक कर्म अनेकानेक ।।
ध्यान-योग दम, सुबुद्धि, सुप्रतिभा, ऋतम्भरा[2] प्रज्ञा हो प्राप्त ।
अनुशासन,सुनियमितता धारें, शान्त-चित्त-वृत्ति भी हो प्राप्त ।।

---

1. घृणा बिना 2. वश में 3. नियमवद्ध 4. पुत्र, सन्तान 5. हँस मुख
6. दिशाएं 7. हो जावें 8. मेरी ।

यम

भद्रा[1] अहिंसा, परम सत्य[2] और पूर्ण रूप में अस्तेय[3] भाव।
नैष्ठिक ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह[4], यमों का पूर्ण रूप में प्रभाव ॥

नियम

बाह्याभ्यन्तर पूर्ण शौच हो, करें सन्तोषामृत का पान।
तप, स्वाध्याय[5] वेदशास्त्र का ईश भक्ति हो स्वर्ग सोपान ॥

दैवी सम्पदायें

अन्तः करण की शुद्धि, अभयता, ध्यान-योग-सुदृढता, ज्ञान।
इन्द्रिय-दमन, सुस्वाध्यायवृत्ति[2], सरलता, तप और सात्विक दान ॥
अहिंसा, सत्य और त्याग शान्ति भी दया, अनिन्दा और अक्रोध।
कोमलता-अलोलुप्त्व[6], अचपलता, अधर्माचरण में लज्जा बोध ॥
धृति, क्षमा, अद्रोह, शौच भी तेज, निरभिमानता भी जान।
मोक्ष हेतु दैवी सम्पदाएं, सदाचरण योग्य इन्हें ही मान।
प्रकृति रहस्यों को हम जानें, कृति[7] निर्माता का हो ज्ञान।
शिव संकल्पों वाला मस्तक, भूतल बनावे स्वर्ग स्थान ॥

बाहुभ्यां यशोबलम्

कर्म शील ही सुबाहु होवें, देश सुरक्षा में दें काम।
अचल सहायक बनें सुदृढ तर, अतुलित- शक्ति-पराक्रम-धाम ॥
भुजा उठाकर जो हम कह दें, करें पूर्ण देकर निज प्राण।
करें कार्य सुकुशलता पूर्वक, दिखादें आन-बान-और शान ॥

करतल कर पृष्ठे

हाथों से हम यश ही कमावें, किसी भी कार्य क्षेत्र का हो काम।
क्या शासन क्या वणिक,[1] कर्म हो चाहे सेवा का हो काम ॥

---

1. न्यायप्रिय 2. परमसत्य ज्ञान पूर्ण 3. चोरी न करना 4. संग्रह न करना
5. वेद पठन आत्मनिरीक्षण 6. विषयों में न फंसना 7. सृष्टि रचयिता।
1. व्यापार।

अभिवादन-सत्कार बड़ों का दान-दक्षिणा-आशीर्वाद ।
करतल[2] ध्वनि करे प्रगट प्रसन्नता, आह्वान[3], प्रभु के गुणानुवाद ।।

4 अथ मार्जन मन्त्रः

ओम् भूः पुनातु शिरसि । ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः ।ओं स्वः पुनातु कण्ठे । ओं महः पुनातु हृदये । ओं जनःपुनतु नाभ्याम् । ओं तपः पुनातु पादयोः ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि । ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र ।।

शिरसि सिरमें, पुनातु पवित्रता करे, भुः प्राण धार प्रभु ।
नेत्रयोः नेत्रों में दे पुनातु पवित्रता, भुवः दुःख नाशक विभु[4] ।।
कण्ठे कण्ठमें, करे पुनातु पवित्रता, स्वः सुख रूप प्रभु ।
महः महान्, दे पुनातु पवित्रता हृदये हृदयमें वही विभु ।।
जनः जनक, दे पुनातु पवित्रता नाभ्याम् नाभि में परमेश्वर ।
तपः तपस्वरूप, देवे पुनातु पवित्रता, पादयोः पगों में भर ।।
सत्यम् सत्यस्वरूप, पुनातु पवित्रता दे, पुनः फिर भी हमें ।
शिरसि सिर में, विमलता देवे पूर्ण रूप में प्रभु हमें ।।
खंम् सर्वव्यापक, ब्रह्म, पुनातु पवित्रता दे, सब अंगों में ।
सर्वत्र सब इन्द्रियों में ज्ञानेन्द्रियों में कर्मेन्द्रियों में ।।

5 संगीत

भूः पुनातु शिरसि

मिथ्या[1] भ्रम और भ्रांति से रखो प्रभु । अब दूर ।
अनृत, चाटु[2]कारिता कष्मल[3]-स्वार्थ हो दूर ।।
निर्दयता, छल-कपट से चुगली से करो दूर ।
टेढ़ी-चल, परअनिष्ट[4] से दुःसंकल्प[5] से दुर ।।

---

1. उलटी समझ 2. चापलूसी 3. अज्ञान 4. पर हानि 5. बुरा सोचना 6. चोरी 7. निन्दित आचरण 8. ताली बजाना 9. पुकार 10. व्याप कप्रभु

निन्दा फरेब, अभद्रता और रूखा व्यवहार ।
हिंसा, अस्थिर-चित्तता चंचलता दो उतार ॥
काम-क्रोध-मद-लोभ और मोह, महा-अहंकार ।
विषय-कामना, स्तेय[6] का मन से भार उतार ॥
अवशेन्द्रियता, भय तथा मन का अवशीकार ।
कदाचार[7] दुराचार भी भ्रष्टाचार निवार ॥

अशान्त-चित्त और कृपणता दीनता हीनता[1] भाव ।
आलस्य और प्रमाद का पड़े जरा न प्रभाव ॥
ईर्ष्या, घृणा और क्रूरता जलन उदासीन भाव ।
निर्लज्जता, असहिष्णुता दूर हो दम्भी स्वभाव ॥
कुकर्म, विकर्म, पर-पीड़ना करना मिथ्याभिमान ।
उजड्डता[2], मूढ़ता, अशुद्धता को न देना स्थान ॥
विषय कथा, अतिमानिता और चिड़चिड़ा पन ।
बदला लेना, मखौल भी, हमसे जाये छन ॥
वैर-विरोध की भावना द्रोह दुराग्रह भाव ।
संशय, सड़ियल पन तथा दूर हो जिद्दी स्वभाव ॥
इन से सिर को पवित्र कर बने पवित्र स्वभाव ।
प्रभु मिले दूरदर्शिता और शीतल सुस्वभाव ॥

भुवः पुनातु नेत्रयोः

कुदृष्टि[3], गृध्र दृष्टि भी पाप की दृष्टि निवार ।
क्रूर[4]-भयंकर दृष्टि भी घृणा-दृष्टि कर क्षार ॥
लोभ-दृष्टि, विषय वासना राग-रंग-अनुराग ।
कुदृश्य दर्शन, वक्रता[5] देवें इनको त्याग ॥
इन से नेत्र पवित्र कर प्रभु लगा निज ओर ।
भद्र-भद्र रहें देखते पड़े न दृष्टि कुठौर ॥

---

1. हीन भाव 2. जंगलीपन 3. बुरी नजर 4. निर्दयी 5. टेढ़ी नजर से देखना ।

स्वः पुनातु कण्ठे

हम से कण्ठ कठोरता रखना कृपा कर दूर ।
मृदुता, मधुरता ही मिले कर्कशता[1] कर दुर ।।
कण्ठाभूषण सुगुण हों कण्ठ से लोग लगाय ।
ऐसी कृपा प्रभु कीजिये भक्ति भाव छा जाय ।।

महः पुनातु हृदये

संकुचितता, अनुदारता और भी ओछापन ।
अश्रद्धा, कुकठोरता दूर करो भगवन ।।
घृणा, अनुत्साह, हीनता निष्ठुरता भी जान ।
निर्दयता, कायरपना दूर करो अदान ।।
शिथिलना, दैन्य, अप्रसन्नता और रूदन का भाव ।
प्रभु हृदय में पवित्रता दो कर इन का अभाव ।।

जनः पुनातु नाभ्याम्

नाभि तन का केन्द्र है यह सशक्त सब शक्त ।
बिगड़े केन्द्र विनाश हो कहते प्रभु सुभक्त ।।
विषय—भोग प्रवृत्तियां करने न दें प्रभु—योग ।
असंयमित जीवन नाशका हेतु कहें सभ्य लोग ।।
हे प्रभु ? शक्ति दीजिये नाभि केन्द्र हो पवित्र ।
तन—शासन-नियन्त्रित हे सुखी हों पुत्र-कलत्र[2] ।।

तपः पुनातु पादयोः

तप स्वरूप परमात्मा तपते हैं प्रभु भक्त ।
पूज्य जनों के चरण को पूजें सब सद् भक्त ।।
ऊपर सिर है तपस्वी नीचे तपस्वी पैर ।
जहां चाहें पहुंचायेंगे जब लग इनकी खैर ।।
प्रभु । तेरे सत्संग में पहुंचायें ये पग ।
स्थान पवित्र हो जाय वह तव[1] लगन जाय जहं लग ।।

---

1. कानों को अच्छी न लगने वाली आवाज । 2. स्त्री तेरी

सत्यं पुनातु पुनः सिरसि

सिर में फिर भी पवित्रता दो मेरे भगवान।
चिन्तन–मनन का केन्द्र है इसी से जग में मान ।।
जहां वैचारिक[1] शक्ति है वने वही भूपेन्द्र[2]।
कर पवित्र मस्तिष्क को वसें जहां परमेन्द्र[3] ।।
शिर पवित्र हो पवित्र सव सिर अपूत सव अपूत।
इस से पुनः है प्रार्थना जीवन सफल हो पूत ।।

खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र

प्रभु फिर भी है प्रार्थना अंग अंग करो पवित्र।
सव के अंग अंग शुद्ध हों वनें सभी सच्चरित्र ।।
प्रभु। समाज, विश्व–राष्ट्र में सव हो जायें पवित्र।
स्वर्ग वने विश्वम्भरा[4] सुख–आनन्द सर्वत्र ।।

5 अथ प्राणायाम मंत्राः

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः।
ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम् ।।

भूः सत्तारूप, जो कुछ है, निज सत्ता से सव में समाया है।
उसी की सत्ता ने यह ब्रह्म-अण्ड सत्तावान् वनाया है ।।
भुवः समाहित[5] चित्तत्ता, चिन्तन स्मरण प्रभु का प्रियतम का।
दुःख निवारण कर्त्ता का और कष्ट क्लेश के हर्त्ता का ।।
स्वः परम सुख रूप प्रभु है सर्व व्यापक प्रकाशमान।
रूप रूप में प्रकाश प्रकाश में सर्वात्मा में है विद्यमान ।।
महः परम तेजोमय-यज्ञीय[6] तथा उदक[7]वत् शीतल जान।
जीवन प्रद है परम मनोहर परमोपास्य महतोऽपि महान् ।।
जनः जनक, प्रादुर्भावयिता विश्व का उससे प्रादुर्भाव[8]।
उसी की माया उसी की लीला कण कण में उसका ही प्रभाव ।।

. स्वतन्त्र चिन्तन 2. प्रमुख 4. प्रभु 5. भूमण्डल, धरती भर तेरी
6. चित्त की एकाग्रता 7. यज्ञ स्वरूप 8. जलसमान 9. उत्पत्ति।

तपः परम तप स्वरूप है उसका ज्योति उसकी सदा ज्वलन्त।
विषय-विकारों को भस्माती कर देती है ज्योतिष्मन्त॥
तप कर कुन्दन बन जाता है भक्त अनुपम ज्योतिको पा।
धन्य-धन्य जन हो जाता है उस के परमैश्वर्य को पा॥

सत्यम् सत्य स्वरूप, अविनाशी सदा एक रस रहता है।
सत्य का निर्भ्रम[1] साक्षात् कार उसे जान, जन करता है॥
अपरिवर्तन शील ब्रह्म ही दर्शनीय है हम सब का।
कर लेता साक्षात् जो उस का जीवन सफल हुआ उस का॥

संगीन 6

सप्त महाव्याहृति की महिमा वेदों में जो गाई है।
अनुपम-अद्भुत भाव भरी वैज्ञानिकता बतलाई है॥
सप्त-धातु, सप्ताह, सप्तर्षि सप्तहोता ही होते हैं।
सप्त-अश्व,सप्तधाम, सप्त—रंग-रूप से विश्व सजाते हैं॥
सप्त-सिन्धु, सप्त मर्यादाए विश्व मर्यादित करती हैं।
मर्यादा मानव जीवन में प्रभु से मेल मिलाती हैं॥
सप्त धातु ज्यों तन को तनतीं सप्ताहो से संवत्सर परिपूर्ण।
सप्त धाम ब्रह्माण्ड सजाए सप्त-रग-रूप-विश्व सम्पूर्ण॥
भूः रस है तो भुवः रक्त है स्वः है तन भर में यह मांस।
महः मेद है, जनः अस्थि है तपः है तपती मज्जा खास॥
सत्यम् शुक्र ही तो हैं तन में तन की सत्ता रहा है धार।
लोक-परलोक में सप्त सत्य हैं जीवजन्तु जीवन-आधार॥
भू है सोम, भुवः सुमंगल स्वः हैं पूर्ण बुद्ध स्वरूप।
महः वृहस्पति, गुरु ही साक्षात् जनः शुक्र का शुद्ध स्वरूप॥
तपः शनैश्चर चल तपता है सत्यम् रवि-आदित्य-प्रकाश।
अखण्ड ज्योति ही तो होती है अखण्ड-पार-ब्रह्म सत्य प्रकाश॥

1. भ्रम रहित

'साप्तपदीनं सख्यम्' क्या हो सुन्दर सूत्र उचारा है।
'सप्तपदी' वामांगी वधू को वनाने वाली धारा है॥
इष है भूः, भुवः ऊर्ज है स्वः रायः धन-ज्ञान विशेष।
मयः मह है, जनः प्रजा, ऋतु तयः, सखा सत्यं विश्वेश॥
सखा प्रभु का हो जाये जो जिस का प्रभु हो जाय सखा।
वाल भी बांका कर सकता कौन कौन सकेगा अंगुली दिखा॥
इस से सप्त महा व्याहृति का जप ही प्रभु का पूर्ण स्मरण।
पूर्ण रूप प्रभु की हैं द्योतक रहो मन्त्र जपते आमरण॥

प्राणायाम विधिः

1. प्रथम लीजिये अन्दर गहरा श्वास यथा शक्ति भरपूर।
2. काया की सव वायु निकालें वाहर कर के सुदीर्घ सुदूर॥
3. वायु को अव वाहर निकाल कर यथा सुविधा वाहर रोकें।
4. वायु को अन्दर सुदीर्घ ही कर के यथा सुसम्भव ही झोकें॥
5. वायु को भीतर भर कर के फिर यथा ससुविधा ही रोकें।
6. रुके श्वास को धीरे धीरे वाहर छोड़ें न चौंकें॥

एक ही प्राणायाम हुआ यह तीन वार विधि से कीजे।
ब्रह्मचर्य-सुस्वास्थ्य-सुरक्षा हित दिन प्रतिदिन ही कीजे॥

6 अथ अघमर्षण मन्त्राः

१. ओम् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥१॥

ऋतं च सत्यम् ऋत और सत्य भी प्राकृत नियम और प्रकृति भी।
अधि अजायत प्रगट रूप में उत्पन्न हुआ करता है सभी॥
अभीद्धात् तपसः प्रकाशमान् तप स्वरूप परमात्मा से।
ततः तत्पश्चात्, रात्री रात्रि अजायत हुई, विश्वात्मा से॥
ततः तत्पश्चात्, अर्णवः समुद्रः प्रक्षुब्ध सागर धरता है।
विराट् पिण्ड रूप प्रगट रूप में सुसमुत्पन्न हुआ करता है॥

२. समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत ।
अहोरात्राणि विदधद् विश्वस्य मिषतो वशी ॥२॥
समुद्रादर्णवात् विराट पिण्ड से संवत्सरः फिर संवत्सर ।
अधि अजायत हुआ है करता उत्पन्न न संशय है तलिभर ॥
विश्वस्थ विश्वभर का नियामक वशी वशयिता, नियन्ता है ।
मिषतः मिष सम्पर्क मात्र से विदधत् धारण करना है ॥
अहोरात्राणि अहोरात्रों को दिन रातों के समयों को ।
सहज स्वभाव से कर देता है साकार रूप में अणुओं को ॥
सूर्या चन्द्र मसौ धाता यथा पूर्वं मकल्पयत् ।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥3॥
धाता विधाता, दिवम् द्यौलोक को पृथिवीम् पृथिवी लोक को भी ।
अन्तरिक्षम् अन्तरिक्ष लोक को स्वः लोक लोकान्तर कोभी ॥
सूर्याचन्द्रमसौ सूरज और चान्द घमकाया करता है ।
अथो तथा, यथा पूर्वम् पूर्व सा अकल्पयत् रचा करता है ॥

संगीत 7

अनन्त ब्रह्म के ब्रह्माण्डों के विषय में क्या कोई जांन सके ।
सागर के एक बिन्दु बराबर भर, बस मानव जान सके ॥
अगम अगोचर अथाह का कैसे मानव थाह है पा सकता ।
कर कर यत्न हजार रह जाता अन्त 'नेति नेति' ही कहता ॥
प्राकृत नियम, प्रकृति के द्वारा विश्व का होता प्रादुर्भाव ।
चार अरब से अधिक काल तक स्थिर रहकर फिर प्रलय प्रभाव ॥
प्रलयबाद फिर परमाणुओं में मचजाती अद्भुत हलचल ।
विराट् पिण्ड से द्रवित खण्ड धरते हैं नाना रूप सकल ।
पृथिवी, चन्द्रादिक, तारागण सौर-मण्डल का भी विस्तार ।
काल चक्र अहोरात्र हैं बनते अगनित जीव-योनि विस्तार ॥
अद्भुत रचना प्रभु की निराली दृष्टि गोचर हो जाती है ।
कर्म शुभाशुभ के फल सुख दुख जीव सृष्टि यह पाती है ॥

अवश्यमेव हि भोक्तव्यं वै कृतं कर्म तु शुभाशुभम् ।
दुष्कर्मों से बच कर मानव शुभ कर्मों में लगता है ॥

7 अथ आचमन मंत्र :

ओम् शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥

शम् कल्याण के करने वाला नः हम सब का ही भगवान ।
देवी: प्रकाशक, आनन्द दायक अभिष्टयेमन वांछित दे दान ॥
आपः सर्व व्यापक ईश्वर भवन्तु हों, कर दे कल्याण ।
पीतये पूर्णानन्द प्राप्ति हित, शंयोः सुख-शान्ति का दान ॥
अभिस्त्रवन्तु वर्षा बरसा दे सभी ओर से हे परमेश ।
नः हम सब पर परम दयालु करुणाकर प्रभु हे विश्वेश ॥

संगीत 8

सर्व व्यापक, सर्व प्रकाशक आनन्द दायक परमेश्वर ।
मनवांछित आनन्द के दाता पूर्णानन्द हित जगदीश्वर ॥
परम कृपा कर हम भक्तों पर सुख-शान्ति की दृष्टि करें ।
सब विधि निज अमृत पुत्रों का करुणाकर कल्याण करें ॥

8 अथ मनसा परिक्रमा मंत्राः

ओम् प्राचीदिगग्नि रधिपतिरसितो रक्षिता दित्या इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नमइषुभ्यो नमएभ्यो अस्तु योऽस्मान् द्वेष्टियं वयं द्विष्मस्तंवो जम्भे दध्मः ॥

प्राचीदिक् अहा पूर्व दिशा में अग्निः प्रकाश स्वरूप प्रभु ।
अधिपपि: स्वामी, विराज रहा है भासमान[1] भास्कर विभु[2] ॥
असितः बन्धनरहित. तमस से रक्षिता रक्षा करता है ।
अदित्याः सौर्य[3]-ज्ञान-रश्मिरूप इषवः बाण बरसाता है ॥
तेभ्यः अधिपतिभ्यः उन अधिपतियों के खिये, नमः नमन ।
रक्षितृभ्यः रक्षकों के लिए इषुभ्यः बाणों कों, नमः नमन ॥

---

1 चमकता सूर्य 2 व्यापक प्रभु 3 सूर्य सम्बन्धी

एभ्यः इन वह अधिपति रक्षण सामर्थ्यों को, नमः नमन ।
अस्तु हो, शत सहस्त्र लक्ष कोटि अधिक वारम्बार नमन ॥
यः जो, अस्मान् हम सबसे ही द्वेष्टि करता है विद्वेष ।
यम् जिससे भी, वयम् हम ही सब द्विष्मः करते हैं विद्वेष ॥
तम् उसको, वः आपके, जम्भे जबड़े में, दध्मः रखते हैं ।
आप के ही न्याय पथ पर चलते और निर्द्वन्द्व विचरते हैं ॥

संगीत 9,

पूर्व दिशा में परम प्रकाशित तेज पुंज प्रभु स्वामी है ।
अन्तरतम अज्ञान का हर्त्ता प्रभु सर्वान्तिर्यामी है ॥
अन्धकार कर दूर हमारा सुख संवर्द्धन करता है ।
वेद ज्ञान-रवि रश्मियों द्वारा उभय सुभासित करता है ॥
प्रकाश कारिणी, रक्षिणी शक्तियों को हम सीस झुकाते हैं ।
वेद ज्ञान की ज्योति से अन्तरतम अन्धकार मिटाते हैं ।
अधिपतियों के लिए नमन हो रक्षणों पायों को भी नमन ।
अन्तर्भेदी वाणों के हित असीमित शक्तियों को भी नमन ॥
जो हम से विद्वेष है करता करने हैं जिससे हम द्वेष ।
रखते न्याय दण्ड में तेरे तज कर वैर द्वेष निःशेष ॥

2. दक्षिणा दिगिन्द्रो ऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता
पितर इषवः : तेभ्यो नमो ऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो
नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं
द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥2॥

दक्षिणा दिक् दक्षिण की दिशा में इन्द्रः इन्द्र, अधिपातिः स्वामी ।
तिरश्चिराजी कुटिल गति-जन-जन्तु जो हैं तिर्यक् गामी ॥
विषधारी-जीव-जन, उत्पथ से रक्षिता रक्षक वही महान् ।
पितरः ज्ञानी जन हैं प्रेरक इस के इषवः वाण समान ॥
तेभ्यः अधिपतिभ्यः उन अधिपतियों के लिये, नमः नमन ।
रक्षितृभ्यः रक्षकों के लिए इषुभ्यः वाणों को, नमः नमन ॥

एभ्यः इन सब अधिपति रक्षण सामर्थ्यों को नमः नमन ।
अस्तु हो. शत सहस्त्र लक्ष कोटि अधिक वारम्वार नमन ।।
यः जो, अस्मान् हम सब से ही द्वेष्टि करता है विद्वेष ।
यम् जिससे भी, वयम् हम ही सब द्विष्मः करते हैं विद्वेष ।।
तम् उसको, वः आपके, जम्भे जवड़े में, दध्मः रखते हैं ।
तेरे ही न्याय-पथ पर चलते और निर्द्वन्द्व विचरते हैं ।।

संगीत 10.

दक्षिण दिशा में सुशासक स्वामी कुटिलों से हमें बचाता है ।
अन्तः सुप्रेरणाएं देकर सत्पथ पर ही चलाता है ।।
माता–पिता, गुरुजन और ज्ञानी सदा प्रेरणा दे देकर ।
हमें कुमार्गों से हैं बचाते विष से भिषक् औषध देकर ।।
जननी-जनक, उपनेता, शिक्षक अन्नदादा भयत्राता जान ।
सत्पथ पर ले जाने वाले पितर है जीवन दाता मान ।।
अधिपतियों के लिये नमन हो रक्षणोपाय. को भी नमन ।
अन्तर्भेदी वाणों के हित असीमित शक्तियों को भी नमन ।।
जो हमसे विद्वेष है करता करते हैं जिससे हम द्वेष ।
रखते न्याय दण्ड में तेरे तज कर वैर द्वेष निश्शेष ।।

3. प्रतीची दिग्वरुणो ऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः ।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम
एभ्यो अस्तु । योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।3।।

प्रतीची दिक् पश्चिम की दिशा में वरुणः वरणीय सुन्दर देव ।
अधिपनिः स्वामी, पृदाकू हिंस्त्र से रक्षिता रक्षक बचाता देव ।।
अन्नम् अन्न–वनस्पति-औषध इषवः वाण रूप हैं मान ।
प्रभु की हिंस्त्र–जन्तु–मानव से अदृश्य शक्ति ही बचाती जान ।।
तेभ्यः अधिपतिभ्यः उन अधिपतियों के लिये, नमः नमन ।
रक्षितृभ्यः रक्षकों के लिए इषुभ्यः वाणों को, नमः नमन ।।

एभ्यः इन सब अधिपति रक्षण सामर्थ्यों को नमः नमन ।
अस्तु हो, शत सहस्त्र लक्ष कोटि अधिक बारम्बार नमन ॥
यः जो, अस्मान् हम सब से ही द्वेष्टि करना है विद्वेष ।
यम् जिससे भी, वयम् हम ही सब द्विष्मः करते हैं विद्वेष ॥
तम् उस को, वः आपके, जम्भे जबड़े में, दध्मः रखते हैं ।
तेरे ही न्याय-पथ पर चलते और निर्द्वन्द्व विचरते हैं ॥

संगीत 11.

पश्चिम दिशा में वरणीय स्वामी बचाता हिंसक सत्वों से ।
अन्न सम्पदा बाण है उसकी पालता पोषक तत्वों से ॥
अधिपतियों के लिये नमन हो रक्षणोपायों कों भी नमन ।
अन्तर्भेदी बाणों के हित असीमित शक्तियों को भी नमन ॥
जो हम से विद्वेष है करता करते हैं जिससे हम द्वेष ।
रखते न्याय दन्ड में तेरे तज कर वैर द्वेष निश्शेष ॥

4. उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः ।
तेभ्योनमोऽधिपतिभ्योनमो रक्षितृभ्योनम इषुभ्योनमएभ्यो
अस्तु । योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥4॥

उदीचीदिक् उत्तर की दिशा में सोमः शान्तरूप भगवान् । व।
स्वजः स्वयंजात, दुर्भावना से अधिपतिःस्वामी महामहान् ॥
रक्षिता रक्षा करनेवाला अशनिः विद्युत्, व्याप्ति विवेक ।
इषवः उसके बाण रूप हैं सुखी हुए प्रभु भक्त अनेक ॥
प। तेभ्यः अधिपतिभ्यः उन अधिपतियों के लिये, नमः नमन ।
रक्षितृभ्यः रक्षकों के लिये इषुभ्यः बाणों को, नमः नमन ॥
एभ्यः इन सब अधिपति रक्षण सामर्थ्यों को, नमः नमन ।
अस्तु हो, शत, सहस्त्र, लक्ष कोटि अधिक बारम्बार नमन ॥
यः जो, अस्मान् हमसब से ही द्वेष्टि करता है विद्वेष ।
यम् जिससे भी, वयम् हम ही सब द्विष्मः करते हैं विद्वेष ॥

तम् उसको, वः आपके, जम्भे जबड़े में, दध्मः रखते हैं।
तेरे ही न्याय-पथ पर चलते और निर्द्वन्द्व विचरते हैं॥

संगीत 12

उत्तर दिशा में सोम है स्वामी स्वजों से रक्षा करता है।
अज्ञान और अविवेक-दुरित का समूलोन्मूलन करता है॥
भलीभान्ति अजन्मा ही है शान्त्यादि गुण से भरपूर।
कर देता निज भक्तों को है आनन्द रस से ही परिपूर॥
चुम्वक-विजली-शक्ति वाण से अशक्त-सशक्त बनाता है।
अदृश्य-शान्त रूप, सोमरसों से जीवन शक्ति बढ़ाता है॥
अधिपतियों के लिये नमन हो रक्षणोपायों को भी नमन।
अन्तर्भेदी वाणों के हित असीमित शक्तियों को भी नमन।
जो हम से विद्वेष है करता करते हैं जिस से हम द्वेष।
रखते न्याय दण्ड में तेरे तज कर वैर द्वेष विशेष॥
ध्रुवादिग्विष्णुरधिपतिः कल्माष ग्रीवो रक्षिता वीरूध इषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम
इषुभ्योनम एभ्यो अस्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं
द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्म : ॥2॥
ध्रुवादिक् नीचे ध्रुवा दिशामें विष्णुः सर्वव्यापक देव।
अधिपतिः स्वामी, कल्माष ग्रीवः काली ग्रीवा वाले से देव॥
रक्षिता वचाने वाला, वीरुधः जड़ी बूटियों से सुविशेष।
इषवः वाण रूप हैं रक्षक करता विषय-विष है निःशेष॥
तेभ्यः अधिपतिभ्यः उन अधिपतियों के लिये नमः नमन।
रक्षितृभ्यः रक्षकों के लिये इषुभ्यः वाणों को, नमः नमन॥
एभ्यः इन सब अधिपति रक्षण सामर्थ्यों को नमः नमन।
अस्तु हो, शत सहस्त्र लक्षकोटि अधिक वारम्वार नमन॥
यः जो, अस्मान् हम सब से ही द्वेष्टि करता है विद्वेष।
यम् जिससे भी, वयम् हम ही सब द्विष्मः करते हैं विद्वेष॥

तम् उसको, वः आपके, जम्भे जबड़े में, दध्मः रखते हैं ॥
तैरे ही न्याय-पथ पर चलते और निर्द्वन्द्व विचरते हैं ॥

संगीत 13

ध्रुवा दिशा में व्यापक स्वामी विषों से रक्षा करता है।
विषय-विषों से भी है बचाता मन निर्विषय बनाता है ॥
सब्ज बाग दिखलाने वाली विषय वाटिका हरी भरी।
लता विटप से लिपट शिखर तक जाती पहुंच अहो प्रेम भरी ॥
ऐसे ही इन्द्रिम विकार छा जाते मानव के मन पर।
प्रभु भक्ति इक मात्र जड़ी का कर लेपन तू मनतन पर ॥
अधिपतियों के लिये नमन हो रक्षणोपायों को भी नमन।
अन्तर्भेदी वाणों के हित असमिती शक्तियों को भी नमन ॥
जो हम से विद्वेषहै करता करते हैं जिससे हम द्वेष।
रखते न्याय दण्ड में तेरे तज कर वैर द्वेष निश्शेज ॥
ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधि पतिः श्वित्रोरक्षिता वर्षमिषवः।
तेभ्योनमो ऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो।
नम एभ्यो अस्तु योऽस्मनन् द्वेष्टि यंवयं द्विष्मस्तं वोजम्भेदध्मः ॥
ऊर्ध्वादिक् ऊपर की दिशामें बृहस्पतिः महतोऽपिमहान्[1]।
अधिपतिः सवमी, श्वित्रः श्वेत से रक्षिता रक्षक वही महान् ॥
वर्षम् वर्षा, इषवः बाण हैं धरती सरसवती होती।
अनावृष्टि, सूखापन मिटता मुदिता हरियाली होती ॥
तेभ्यः अधिपतिभ्यः उन अधिपतियों के लिये, नमः नमन।
रक्षितृभ्यः रक्षकों लिये इषुभ्यः वाणों को. नमः नमन ॥
एभ्यः इन सब, अधिपति रक्षण सामर्थ्यों को, नमः नमन।
अस्तु हो, शत सहस्त्र लक्षकोटि अधिक बारम्बार नमन ॥
यः जो, अस्मान् हम सबसे ही द्वेष्टि करता है विद्वेष।
यम् जिससे भी वयम् हम ही सब्र द्विष्मः करते हैं विद्वेष ॥

---

1. सबसे बड़ा स्वामी बड़ों से भी बड़ा

तम् उसको, वः आपके, जम्भे जबड़े में, दध्मः रखते हैं।
तेरे ही न्याय पथ पर चलते और निर्द्वन्द्व विचरते हैं ।।

संगीत 14

उपरि दिशामें सुमहान् स्वामी श्वेत, शून्य से बचाता है।
वर्षा वाणों से है वींधता अकाल-सुकाल बनाता है ।।
वेद का वक्ता परम ज्ञानकी अमृत वर्षा करता है।
ज्ञान लव[1] दुर्विदग्ध जनों को सज्ञान-सुवित्त[2] ही करता है ।।
अधिपतियों के लिये नमन हो रक्षणोपायों को भी नमन।
अन्तर्भेदीवाणों के हित असीमित शक्तियों को भी नमन ।।
जो हम से विद्वेष है करता करते हैं जिससे हम द्वेष।
रखते न्याय दण्ड में तेरे तज कर वैर द्वेष निश्शेष ।।

संगीत 15

पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण नीचे ऊपर है भगवान्।
दृश्य शक्तियों, अदृश्य शक्तियों से रक्षा करता है महान् ।।
ऐसे उस महा प्रभु का चिन्तन मनसा ही परिक्रमण करें।
उस की परा शक्तियों को भज भक्ति भाव से भजन करें ।।
माता पिता भी पूर्व दिशा है दिशा दक्षिणी गुरु-आचार्य।
सुत-दारा है दिशा पश्चिमी उत्तर दिशा सन्मित्र, सदार्य ।।
दिशा ऊर्ध्व पारगर-ह्यज्ञानी ध्रुवादिशा सत् सेवक जान।
समाज राष्ट्र में पूजनीय हैं सभी वर्ण के मनुज समान ।।

दिग्विज्ञान संगीत 16

पूर्व दिशा सम्मुख की दिशा में तेज पुंज प्रभु का चिन्तन।
"तमसो माज्योतिर्गमयेति" प्रकाश मयी ज्योति दर्शन ।।
अन्तरतम अहा ! चमक उठे अज्ञान तिमिर का महाविनाश।
स्वच्छान्तः करण में फैले पूर्ण रूप में महा प्रकाश ।।

---

1 महामूढ़ 2 महाज्ञानी।

माता पिता भी पूर्व दिशा है दिखाया जिन्होंने है संसार ।
ऊपर-ऊपर, ऊंचा उठाया किया है कितना ही उपकार ।।
नम नम नमन करें उन्हें भी और करें सेवा भर पूर ।
मानव चोला पहना कर किया सदा विकासोन्मुख परिपूर ।।

2 दिशा दक्षिणी हस्त हमारा दक्ष, दक्षता में महा शूर ।
सत्य-न्याय का परम सुपोषक भ्रष्टाचारों से करे दूर ।।
उत्तम गुरु आचार्य दक्षिणी दिशा उन्हीं के पथ पर चल ।
मानव चोले को करें सार्थक रहस्योद्‌घाटन कर अविकल[1] ।।

3. दिशा पश्चिमी पीठ पीछे है अविदित[2] शक्ति बचाती है ।
अन्न-दान, शुभ कर्मोपाय हैं सावधानी ही बचाती है ।।
सुत-दारा[3] भी दिशा पश्चिमी स्नेह संवर्द्धन करते हैं ।
जीवन की पश्चिम सन्ध्या में सुसुत[4] उतारा[5] करते हैं ।।

4. वाम हस्त है दिशा उतरी ढाल समान बचाता है ।
विद्युत्-सशक्ताकर्षण-चुम्बक रोग दुरित को नसाता है ।।
उत्तर दिशा सत् मित्र सदा सत् आर्य श्रेष्ट पुरुष को मान ।
दुर्गुण-दुर्व्यसनों से बचाकर उत्तम मानव बनाता जान ।।
दिग् दर्शक ज्यों यंत्र सदा ही दिशा उत्तरी बताता है ।
ध्रुव तारा ज्यों भटकते यात्रियों को सन्मार्ग दिखाता है ।।
ऐसे ही सन्मित्र-सदार्य समाज,राष्ट्र को बचाते हैं ।
उत्तम-दशा-दिशा दर्शा कर दु:ख संकट को दुराते हैं ।।

5. ध्रुवा दिशा नीचे की दशा है विषय-विषों का है विस्तार ।
विषयों मे फँस अध: पतन है निश्चय होता कहां निस्तार[6] ।।
विष-मोचन हारा प्रभु विष्णु व्यापक ही तो बचाता है ।
घट घट वासी, अन्तर्यामी के बिन कौन चिताता[7] है ।।

---

1. पूर्ण रूप से 2. अज्ञात 3. पत्नी 4 उत्तम सन्तान 5. सारसम्भार
6. बचाव 2. सावधान करना ।

ध्रुवा दिशा सत् सेवक ही तो सेवा स्वामी की करता।
रक्षा सब कठिनाइयों से कर सुखी गृही को है करता॥
पग भी तो सच ध्रुवा दिशा है पहुंचाते अत्र तत्र[1] सर्वत्र।
तन की रक्षा करते सतत[2] हैं दौड़ धूप कर यत्र[3] और तत्र॥

6. उपरि दिशा वर्षा बरसा कर अन्न उपजा सुख भरती है।
जीव जन्तु और मानव सृष्टि दैहिक सुख भोग करती है॥
बृहस्पति-ब्रह्मज्ञानी-महागुरु ज्ञानामृत वर्षा बरसा।
महा शुष्क हृदयों को देता परमानन्द हर्षा सरसा॥
तन में समुन्नत मस्तक हो तो सुविचार धारा बहाता है।
तन को नियंत्रित सुयमित ही रख सुस्वस्थ सशक्त बनाता है॥
अहो! दिशाओं का भी ज्ञान यह क्या ही आनन्द दायक है।
आत्म-ज्ञान, सुविज्ञान ज्ञान का कितना परम सहायक है॥

9. अथ उपस्थान मंत्राः

1 ओम् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उतरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥

उत् उत्कृष्ट, वयम् हम, तमसः प्रकृति, माया से, परि पार।
ऊपर. उत्तरम् उत्कृष्टतर ही, स्वः आत्म रूप को लेवें निखार॥
पश्यन्तः अहा देखते हुए ही देवत्रा देवों में, वहार।
उत्तमम् उत्कृष्टतम ही, ज्योतिः परम ज्योति स्वरूप निहार॥
सूर्यम् प्रेरक, देवम् देव को अगन्म प्राप्त हुए हैं आज।
अहा प्रकाश पुंज अहा तेज पुंज अहा ज्योत ज्योति का साज॥

संगीत 17

उत्कृष्ट प्रकृति से उत्कृष्टतर स्व आत्मा का भी करें विचार।
सर्वोत्कृष्टतम तेजरूपका सुप्रकाश निज आत्मा में धार॥
परम तेजस्वी-प्रकाशमान का जब हो अन्तरतम में प्रकाश।
चमक उठेगा जीवन सारा कट जायेंगे माया पाश॥

1. यहां वहां सब कहीं 2. निरंतर 3. जहां तहां।

उत्तम ज्योति का दर्शन होगा छाजायेगा परमानन्द
छाया माया की छूटेगी जीवन सफल-सुखद-सानन्द ।।

2 उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः ।
दृशे विश्वाय सूर्यम् ।।

त्यम् उस, जातवेदसम् सर्वव्यापक सूर्यम् सर्व प्रकाशकको ।
देवम् देव को, उ ही विश्वाय सब के, दृशे दिखाने को ।।
केतवः पताकाएं ध्वजाएं उद्वहन्ति रही हैं फहरा ।
सर्वोत्तम शासक की जगमें ध्वजा रहीं देखो लहरा ।।

संगीत 18

सूर्य चन्द्र-नक्षत्र-ध्वजाएं ऊंचेनभ फहरा रहीं ।
ऊपर बहुत ऊंची दूरी पर लहरा शासक जता रहीं ।।
कितना सुन्दर, सुदृढ, सुव्यवस्थित शासन है उस कर्त्ता का ।
दिखा रहे प्राकृत देव सारे उसी शासक ब्रह्म धर्त्ता का ।।
आओ उसी के ही शासन में हम भी शासित हो जावें ।
स्वर्गानन्द की कथा ही क्या है मोक्षानन्द भी पा जावें ।।

3 चित्रं देवाना मुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आप्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्ष सूर्य आत्मा जगतस् तस्थुषश्च स्वाहा ।।

चित्रम् अद्भुत परम मनोहर देवानाम् देवों का भी ।
चक्षुः नेत्र, प्रकाशक है वह मित्रस्य दिनकर का भी ।।
वरुणस्य चन्द्रमा का तथा अग्नेः सुप्रसिद्ध अग्नि का भी ।
अनीकम् बल, उत् अगात् आगया मिलन हो गया साक्षात् भी ।।
द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षम् द्यौ भूअन्तरिक्ष इन लोकों को ।
आप्रा व्याप रहा है, रमा है सूर्यः सूर्य दिशाओं को ।।
स्वाहा सचमुच ही, जगतः च तस्थुषः चेतन जड़का अहो ।
आत्मा[1] जीवनाधार है स्वामी जान लिया है अही अहो ।।

---

1 परमात्मा

संगीत 19

अति अदभुत अति ही सुमनोहर देवों को दे शक्ति दान।
रवि-शशि-विद्युत्-अग्नि ज्योतियों को ज्योति करता है प्रदान ।।
अनन्त शक्ति वल सामर्थ्यों का एक मात्र परिपूर्ण भण्डार।
भू-अन्तरिक्ष-द्यौ लोक लोकान्तर रच अनन्त ब्रह्माण्डों को धार ।।
व्याप रहा, रम रहा, प्रकाशित कर जड़-चेतन विश्व अहो !
परमानन्द ज्योति को पाकर रमते योगी अहो ! अहो !!

संगीत 20

चित्र विचित्र अद्भुत सुमनोहर उस प्रियतम का क्या कहना।
जिधर देखता हूं मैं उधर ही अहो ! सौन्दर्यम् ही कहना ।।
जल-थल-नभ में रचना अनुपम क्या ही अदभुत रचाई है।
पशु-पक्षी-कृमि-कीट-पतंग-अग रच सृष्टि क्या सजाई है ।।
वन-पर्वत-सागर-नदियों का झीलों-झरनों-स्त्रोतों का।
परम सुहावना दृश्य दिखाया हीरा-पन्ना-मोतियों का ।।
सूर्य चन्द्र-नक्षत्रों को कैसे चमक से चमचम चमकाया।
विन आधार, विन रज्जु-स्तम्भ के कैसे थमाया-भ्रमाया[1] ।।
पत्र पुष्प-फल-कन्दमूल रच जीव-भोग-भुगताया है।
रूप-गन्ध-रस से सरसा कर मस्ती में मस्ताया है ।।
विष बूटी, संजीवनी बूटी तेरी ही अद्भुत है देन।
दिखा दिया प्यारे, तूने यह जीवन समझ चंचल-जल फेन[2] ।।

संगीत 21

स्वात्मा में प्रभु की अनुभूति :

मेरा इष्ट है तू-मेरे मन का चिन्तन तू।
मेरे मनका मन-का तू-मेरी माला का मनका तू ।।

---

1 अपनी अपनी परिधि में घुमाया। 2 झाग

मेरे नेत्रों में ज्योति है तू —मेरे श्रोत्रों की श्रुति हैं तू।
मेरे वाक् में वाणी तू—मेरी रसना का रस है तू।।
मेरे श्वासों में प्राण है तू —मेरा कण्ठाभूषण तू।
मेरे हृदय की धड़कन तू—मेरा केन्द्र संचालक तू।।
मेरे करमें करतब तू—मेरे पगों में गति है तू।
शिख से नख तक है तू—नख से शिख तक है तू।।
अब रही न मैं की हू—बस हो गया तू ही तू।
तू ही तू तू ही तू—तू ही तू तू ही तू।।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ड़ाच्छुक्र मुच्चरत् पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतेएं ऋणुयाम शरदः शतं प्रव्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः ञतात् ।।

तत् वह, चक्षुः महत् चक्षु है देवहितम् दिव्यता का धाम।
पुरस्तात् अभिमुख ही है, शुक्रम् शुद्ध वीर्य शक्ति बलधाम।।
उच्चरत् उन्मीलित, उदित है खुला हुआ ही सदा अपलक।
ज्ञानी-ध्यानी-मुनि-तपस्वी योगी अनुपम पाते झलक।।
पश्येम हम रहैं देखते शरदः शतम् सौ बरसों तक।
जीवेम हम जीते रहैं प्रभु शरदः शतम् सौ बरसों तक।।
श्रृणुयाम सुनते ही रहें हम शरदः शतम् सौ बरसों तक।
प्रव्रवाम हम रहें बोलते शरदः शतम् सौ बरसों तक।।
अदीनाः स्याम अदीन रहें हम शरदः शतम् सौ बरसों तक।
भूयःच और फिर अधिक शरदः शतात् सौ बरसों तक।।

संगीत 22

तत्सत् वह पर ब्रह्म देव जो ब्रह्माण्डों का सृष्टा है।
सर्वज्ञ-सर्वान्तर्यामी अपलक नेत्र सर्व द्रष्टा है।।
सर्व दिव्यताओं से पूर्ण है सदा हमारे अभिमुख है।
सर्व शक्तियों से परिपूर्ण सच्चिदानन्द सुख ही सुख है।।

सौ बरसों तक रहें देखते जीवें हम सौ बरसों तक ।
सुनें उसे सौ बरसों तक और बोलें भी सौ बरसों तक ॥
अदीन रहें सौ वरसों तक और अधिक सौ बरसों से जीवें ।
देखें, सुनें, बोलें, अदीन रह प्रभु भजन करते जीवें ॥

10 अथ गुरु मंत्रः

ओ3म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो ।
देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

भूः सत्, भुवः चित्, स्वः आनन्द रूप सच्चिदानन्द कहाता है ।
भू-अन्तरिक्ष और घौ लोक को निज ज्योति से चमकाता है ॥
सवितुः देवस्य सवितादेव, तत् उस,वरेण्यम् वरणीय दिव्य[1] ।
भर्गः तेज-परम सौन्दर्य को प्रगटाता हरता है अदिव्य[2] ॥
धीमहिधारण करें, यः ज्यो,नः हमारी, धियः प्रवृत्तियों को ।
धारणाओं को, कर्मो को भी और हमारी बुद्धियों को ॥
प्रचोदयात् सुप्रेरे निरन्तर सदा ही सुप्रेरणा करे ।
दुष्कर्मों से सदा बचा कर प्रकाश-दिव्यता प्रदान करे ॥

सगीत 23

प्रकृति सत् है केवल लेकिन चित् भी नहीं आनन्द नहीं ।
जीवात्मा सत् भी है चित् भी पर वह भी आनन्द नहीं ॥
परमात्मा सत् भी है चित् भी परम परम आनन्द भी है ।
परम-शन्ति-सुख-स्त्रोत का सागर सच्चित् आनन्द कन्द भी है ॥
उत्पत्ति-स्थिति प्रलय का कर्त्ता सर्व प्रेरक, सविता देव ।
परम मनोहर-दिव्य तेजस्वी धारण करने योग्य सुदेव ॥
करें धारण-चिन्तन उसका हरदम रखें उसी का ध्यान ।
मन-बुद्धि-चित-अहंकार को प्रकाश-दिव्यता करे प्रदान ॥

संगीत 24

परम सुरक्षक, प्राण से प्यारे दुःखों को हरने वाले ।
सुख स्वरूप ! सुख दाता भगवन् आनन्द भी देने वाले ॥

1. दैवी गुण युक्त 2. रजो गुण तमो गुण ।

आप के तेजोमय स्वरूप का सदा ध्यान हम धरते हैं।
जो अति श्रेष्ट-वरण योग्य है आप का चिन्तन करते हैं॥
सृष्टि उत्पन्न करने वाले पाप दग्ध करने वाले।
जीवन दाता! सर्वलोक के प्रेरणा भी देने वाले।
अपने आपको प्रभो! आपके हम समर्पित करते हैं।
करें सुप्रेरित बुद्धि हमारी यही प्रार्थना करते हैं॥

अथ समर्पणम्

हे ईश्वर दयानिधे! भवत् कृपयाऽनेन
जपोपासनादि कर्मणा धर्मार्थ काम मोक्षाणां
सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः॥

संगीत 25

हें ईश्वर करुणा निधे! जो जो उत्तम काम।
कर पाते हैं लोग हम कृपा आपकी तमाम॥
सभी समर्पण आपके करते हृदय से हम।
पावें, प्राप्त हों आपको चार पदार्थ शम्॥
धर्म-आचरण सत्य-न्याय का अर्थ-पदार्थ प्राप्ति।
काम-धर्म और अर्थ से इष्ट-भोग-सुप्राप्ति॥
सब दुःखों से छूट कर रहना सदा सानन्द।
सिद्धि चार पदार्थ की प्राप्त हो मोक्षानन्द॥

11 नमस्कार मंत्रः

ओम् नमः शम्भवायच मयो भवाय च
नमः शंकराय च मयस्कराय च
नमः शिवाय च शिवतराय च॥

शंभवाय शान्ति स्वरूप के लिये, नमः हो नमस्कॉर।
मयः भवाय सुख रूप प्रभु के लिये. नमः हो नमस्कार॥
शंकराय कल्याण के कर्त्ता सुख कारी को, नमः नमन।
मयः कराय च कल्धाण कारी सुख कारी को, नमः नमम॥

शिवाय मंगल कारी के हित शिवतराय अधिकाधिक भी
मंगलकारी देव के हेतु नमः नमन हो मन से भी ॥

संगीत 26

मेरे प्यारे प्रियतम भगवन् नत मस्तक शत शत प्रणाम ।
शान्तरूप हे ! सुख दाता हे ! तुझ को हैं शत शत प्रणाम ॥
सुख कारी हे भगवन् ! मेरे कभी कमी सुख की न की ।
प्रतिपल मेरे लिये प्रभु हे ! अपार सुखो की वर्षा की ॥
मोक्ष रूप कल्याण के नर्त्ता मंगल कर्त्ता शत शत प्रणाम ।
सुख–शान्ति–आनन्द के दाता शत शत मेरे तुझे प्रणाम ॥

ओ3म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

संगीत 27

ओम् त्रय सन्ताप हरो प्रभु त्रय सन्ताप हरो ।
ताप सन्तप्त हुआ जग, अब तो दूर करो ॥ ओम्
1. त्रिविध ताप जग तपा रहे हैं प्रथमाध्यात्मिक ताप । प्रभु
द्वितीयताप आधिभौतिक है और तृतीयाधिदैविक ताप ॥
2. आध्यात्मिक जो राग–द्वेष ज्वर विद्या से होता है । प्रभु
आधिभौतिक जो शत्रु व्याघ्र और विष जन्य होता है ॥ ओं
3. आधिदैविक-अतिवृष्टि, अनावृष्टि शीता त्युष्णता से । प्रभु
मन–इन्द्रियाशान्ति से होता और और ईतियों से ॥ ओं
4. तीन ताप से परम पिताजी हमें वचाइये सदा । प्रभु
श्रद्धालु हम भक्त आपके आप में रमें सदा ॥ ओं

शान्ति पाठः

ओम् द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी ।
शान्तिरायः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः ॥
शान्तिर्विश्वे देवाः शान्ति ब्रह्म शान्तिः सर्वं ।
शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥

संगीत 28

आदित्य लोक दे शान्ति हम को अन्तरिक्ष करे शान्ति प्रदान ।
पृथिवी लोक हो शान्ति दायक आपः जल दे शान्ति दान ।।
ओषधि मात्र त्रिदोष दूर कर दीर्घायु करे स्वास्थ्य प्रदान ।
शान्ति दायक होवें वनस्पति सूर्यचन्द्र दें शान्ति दान ।।
विश्वदेव, तन-मन आत्मा को ब्रह्मज्ञान करे शान्ति प्रदान ।
शान्ति समा जाये हम में बस हो जावें हम शान्ति समान ।।
शान्ति देवी हे ! शान्त रूप निज करुणा कर के करो प्रदान ।
बढ़ती जावे शान्ति निरन्तर कभी न हो इस का अवसान ।।

शमित्योम्

प्रभु भक्ति के गीत

भजन नं. 1.

कल्याण मेरे इस जीवन का, भगवान् न जाने कब होगा ।।
जिससे भय-भ्रान्ति मिटा करते, वह ज्ञान न जाने कब होगा ।।
जिससे निज दोष दिखा करते पापों-अपराधों से डरते ।
उस सद् विवेक का मानव में सम्मान न जाने कब होगा ।।
शीतलता जिससे आती है सारी अशान्ति मिट जाती है ।
वह नित्य प्राप्त है सोम सुधा पर पान न जाने कब होगा ।।
अच्छे दिन बीत जाते हैं गुरुजन बहु विध समझाते हैं ।
भोग-स्थल से योग-स्थल में प्रस्थान न जाने कब होगा ।।
वासना और चिन्ता मन में फिर कुछ भी नहीं सताती है ।
जिससे प्रभु जी तेरा दर्शन हो वह ध्यान न जाने कब होगा ।।

भजन नं. 2.

ओम् है जीवन हमारा ओम् प्राणाधार है ।
ओम् है कर्त्ता विधाता ओम् पालन हार है ।।
ओम् है दुःख का विनाशक ओम् सर्वानन्द है ।
ओम् है बल तेज धारी ओम् करुणाकन्द है ।।

ओम् सबका पूज्य है हम ओम् का पूजन करें।
ओम् ही के ध्यान से हम शुद्ध अपना मन करें॥
ओम के गुरु मन्त्र जपने से रहेगा शुद्ध मन।
बुद्धि दिन प्रतिदिन बढ़ेगी धर्म में होगी लगन॥
ओम के जप से हमारा ज्ञान बढ़ता जायगा।
अन्त में प्रिय ओम् हमको मोक्ष तक पहुंचायगा॥

भजन नं. 3.

आनन्द स्त्रोत बह रहा पर तू उदास है।
अचरज है जल में रह के भी मछली को प्यास है॥
फूलों में ज्यों सुवास है और ईख में मिठास है।
भगवान का त्यों विश्व में कण कण में वास है॥
टुक ज्ञान चक्षु खोल के तू देख तो सही।
जिसको तू ढूंढ़ता वो सदा तेरे पास है॥
कुछ तो समय निकाल आत्म शुद्धि के लिए।
नर जन्म का उद्देश्य न केवल विलास है॥
आनन्द मोक्ष का न पा सकेगा तब तलक।
तू जब तलक 'प्रकाश' इन्द्रियों का दास है॥

भजन नं. 4.

ईश्वर तुम्हीं दया करो तुम बिन हमारा कौन हैं।
दुर्बलता दीनता हरो तुम बिन हमारा कौन है॥
जग को बनाने वाला तू दुःख को मिटाने वाला तू।
बिगड़ी बनाने वाला तू तुम बिन हमारा कौन है॥
माता तू ही तू ही पिता बन्धु तू ही तू ही सखा।
केवल तुम्हारा आसरा तुम बिन हमारा कौन है॥
तेरा भजन, तेरा मनन तेरी ही धुन, तेरी लगन।
तेरी शरण में आये हम तुम बिन हमारा कौन है॥

भजन नं. 5.

प्रभु आप से महान कोई और नहीं।
तुम सा स्नेही कृपानिधान कोई और नहीं ॥
तुम हो अखिल जगत के स्वामी।
घट—घट बासी अन्तर्यामी ॥
तुम हो शक्ति मान सुख की खान। कोई—
रवि—शशि—सिन्धु—धरा—गगन में
तुम नयनन में तुम तन-तन में।
तुम हो सब में विराजमान। कोई—
किस को मन की व्यथा सुनाऊं
किस के द्वारे 'प्रकाश' जाऊं।
दानी आपके समान कोई और नहीं।
काहे तुमने मुझे विसारा
मैं हूं अविचल भक्त तुम्हारा।
तुम हो मेरे प्रिय भगवान कोई और नहीं ॥

भजन नं. 7.

प्रभु एक देवता पुजारी सारी दुनियां।
दाता भगवान है भिखारी सारी दुनियां ॥
द्वार पे उसके जाके कोई पुकारता।
परम कृपा से अपनी भव से है तारता।
ऐसे दीनानाथ पै वलिहारी सारी दुनियां ॥
दो दिन का जीवन प्राणी मन में विचार ले।
अपने प्रभु को तू मन में निहार ले ॥
विना प्रभु नाम के दुखारी सारी दुनियां ॥
प्रभु का प्रकाश जव अन्दर जगायेगा।
प्यारे प्रभु के दर्शन अन्दर तू पायेगा।
ज्योति से जिसकी उजियारी सारी दुनियां ॥

भजन नं. 7.

तेरे पूजन को भगवान् वना मन मन्दिर आलीशान ।

किसने देखी तेरी माया किसने भेद तेरा है पाया ।
ऋषि मुनि हारे कर कर ध्यान । वनामन-
किस ने देखी तेरी सूरत कौन बनावे तेरी मूरत
तू है निराकार भगवान् । वनामन-
यह संसार है तेरी मन्दिर तू रमा है इस के अन्दर.
करते ऋषि-मुनि सदा ही ध्यान । वनामन-

तू हर गुल में तू बुलबुल में
तू हर शाख में हर पातर में ।

तू हर दिल में प्रभु को मान । वनामन-
तू ही जल में तू ही थल में तू ही वन में तू मन में
तेरा रूप अनूप महान् । वनामन-
तूने राजा रंक वनाए. तूने भिक्षुक राय बनाए ।
तेरी लीला ईश महान् । वनामन-
झूठे जग की झूठी माया मूरख इसमें क्यों भरमाया
कूछ कर जीवन का कल्याण । वनामन-

भजन नं. 8.

भगवान् भजन करने के लिये, जो प्रात समय उठ जाता है ।
आनन्द की वर्षा होती है दुनिया में वही सुख पाता है ॥
उठ प्रातः समय ही स्नान करो, और मन में शुद्ध विचार भरो ।
फिर उस ईश्वर का ध्यान धरो जो दुःख सव के ही मिटाता है ॥
यह वेद जो ईश्वरीय ज्ञान है यह सभी सुखों की खान है ।
जो ग्रहण इसे कर लेता है वह मुक्ति पद को पाता है ॥
यह ऋषियों का फरमान है गर मान ले तो कल्याण है ।
जो ईश में मन को लगाता है वह परमानन्द को होता हैं ॥

भजन नं. 9

चिन्तन करले तू प्राणी सर्वाधार का हां ।
रचने हारा है जो कि सब संसार का हां ।
वांगे दुनिया की कैसी है रचना करी ।
जर्रे जर्रे के अन्दर है लीला भरी ।

कैसा सुन्दर है माली इस गुलजार का हां ॥
जीव रूपी क्या बूटे सजा कर धरे।
भोगे कर्मों को प्राणी करे और भरे ।
कैसा सुन्दर है न्याय इस दरबार का हां ॥
जितनी वस्तु का चाहे जितना भोग करे।
फिर भी देखो खजाने भरे के भरे ।
कैसा पूरन भण्डारी है भण्डार का हां ॥

भजन नं. 10

प्रभु चरणों में मन अपना लगाया कर लगाया कर।
समय अनमोल है विषयों में न इसको गँवाया कर॥
वह है निर्दोष और निर्भय सभी संसार का स्वामी।
वही सब का सहायक है उसी के गीत गाया कर॥
ये सूरज-चान्द और तारे बनाये जिसने है सारे।
उसी इक ओ३म् के ही नाम की बंसी बजाया कर॥
वही रक्षक वही स्वामी वही दुःख दूर करता है।
उसी के द्वारा पर नन्दलाल तू झोली फैलाया कर॥

भजन नं 11

ओ३म् नाम प्रिय बोलरे तुझे शान्ति मिलेगी।
चहुं दिशि प्रभु की ज्योति निरख ले।
ज्ञान चक्षु को खोल रे। तुझे—
घृणा–द्वेष–अभिमान को तज दे।
प्रेम प्रीति रस घोल रे। तुझे—
धर्म कर्म की हाट लगाले।
पूरा पूरा तोल रे। तुझे—
विषयों में मत खो 'प्रकाश' तू
मानुष तन अनमोल रे। तुझे—



